International Journal of Applied Research 2019; 5(1): 486-487

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(1): 486-487
www.allresearchjournal.com
Received: 27-11-2018
Accepted: 29-12-2018

प्रियंका कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय–हिन्दी–विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वरनगर, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
प्रियंका कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय–हिन्दी–विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वरनगर, दरभंगा, बिहार, भारत

श्यौराज सिंह बेचैन के साहित्य में दलित–चेतना

प्रियंका कुमारी

सारांश
समकालीन हिन्दी साहित्य में दलित–विमर्श की धारा प्रखरता से प्रवाहित हो रही है और अलित चिंतक–साहित्यकार अपनी कृतियों के जरिए ना सिर्फ इसे प्रवाहमान बनाए हुए है बल्कि दलित–विमर्श को नव आयाम प्रदान कर दलित चेतना को भी जागृत कर रहे हैं। दलित–चेतना की उत्पत्ति हिन्दू वर्ण व्यवस्था विरूद्ध स्वतंत्रतापूर्व महात्मा ज्योतिबा फूले एवं दलित मसीहा बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर के द्वारा राष्ट्रव्यापी स्तर पर चलाए दलित–आंदोलन से हुई है। जिसका मूल ध्येय सदियों से शोषित–पीड़ित दलित जातियों को अपने हक–हकूक, मानवीय अधिकार प्राप्ति हेतु संबल और जागरूक बनाना है।
आधुनिक युग में दलित साहित्यकारों ने जातिगत रूढ़ियों के विरूद्ध जैसा शंखनाद किया है उससे यह साफ हो जाता है कि दलितों में अस्तित्व बोध जागृत हो चुकी है और वे मनुवादी संविधान को नकारते हुए जन्मप्रदत्त श्रेणीक्रम के बदले मनुष्य की श्रेष्ठता का आधार उसके कर्म को मानते है। दलित चेतना को प्रखर बनाने में दलित साहित्यकार मोहनदास नैमिशराय ओमप्रकाश वाल्मीकि, शरण कुमार लिम्वाले, सूरजपाल चौहान आदि का योगदान रहा है। विवेच्य लेखक डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन भी दलित साहित्य के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर है और इनकी दलित चेतना इसलिए प्रासंगिक प्रतीक होती है क्योंकि ये सिर्फ दलित–पीड़ा को ही अभिव्यक्त नहीं करते है वरन् इनका चिंतन समस्या के जड़ को दग्ध करने की प्रेरणा देता है।

मुख्य–शब्दः दलित चेतना, वर्ण व्यवस्था, दलित विमर्ष

प्रस्तावना
'दलित' शब्द का सीधा अर्थ है– दबाया गया, कुचला, उत्पीड़ित। भारतीय सामाजिक व्यवस्था जातियों में बँटी रही है और इसका निर्धारण जन्म आधार पर किया जाता है। वर्ण व्यवस्था के कारण समाज के निचले पायदान की जातियों को असहनीय और अकथनीय शोषण की पीड़ा झेलनी पड़ी है। संभवतः इसलिए दलित शब्द को परिभाषित करते हुए श्यौराज सिंह बेचैन ने लिखा है कि ''दलित'' शब्द आधुनिक युग की देन अवश्य है, परंतु इससे पूर्व इन जातियों को अनार्य, बहिष्कृत, अछूत और अस्पृश्य कहा जाता था तब भी इनका सामाजिक–सांस्कृतिक अस्तित्व पृथक ही था। समाज, साहित्य और परिस्थितियों में लगातार परिवर्तन होता रहा है, उसी तरह दलितों की पहचान बदलती रही है, परंतु हर युग में उन्हें सवर्णों से संघर्ष करना पड़ता रहा है।''[1] आज दलितों को महादलित श्रेणी में तब्दील कर दिया गया है सरकारी स्तर से और इसी आधार पर उन्हें आरक्षण सहित अन्य सुविधाएँ भी प्राप्त है परंतु ना तो दलितों का शोषण–उत्पीड़न थमा है और ना ही सामाजिक व्यवस्था बदली है। आज भी दलितों के घर पृथक ही है–गाँव से बाहर। दलितों की स्थिति में बदलाव हेतु साहित्यकारों, सामाजिक कार्यकत्ताओं आदि का समूह हुंकार रहा है परंतु वर्ण व्यवस्था की जड़े जस की तस है।
दलित साहित्य के आधार स्तंभ बने डॉ. श्यौराज सिंह 'बेचैन' चर्चित साहित्यकार और दलित विचारक है। दलित पत्रकारिता पर डॉ. अम्बेडकर का प्रभाव, दलित क्रांति का साहित्य, क्रौन्च हूँ मैं, नई फसल, भरोसे की बहन, अन्याय कोई परम्परा नहीं, आदि जैसी रचनाओं के साथ–साथ अपनी आत्मकथा 'मेरा बचपन मेरे कंधों के जरिए डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन ने दलित विमर्श, चिंतन को प्रभावित किया है। चमार जाति से आनेवाले श्यौराज सिंह बेचैन का बचपन अभाव–प्रताड़ना की आग में जला है और बाल मजदूरी–बूट पॉलिश जैसे कार्यों को कर इन्होंने शिक्षा की बदौलत अपनी पहचान कायम की है। इनका साहित्य भोगे हुए यथार्थ का धधकता हुआ प्रामाणिक दस्तावेज है। इनकी कविता, कहानी, निबंध, आत्मकथा सब दलितों की वर्तमान स्थिति से अवगत करा नई चेतना को प्रस्फुटित कारता है। इनका साहित्य बताता है कि दलितों की नियति अभाव में सिसकना ही है। इन्हें या तो काम नहीं मिलता है और अगर मिलता भी है तो वैसा कार्य जिसे अन्य जाति के लोग नहीं करना चाहते है।

इनके साहित्य में आधुनिक सभ्य समाज में मानवीय उत्पीड़न के आधार जाति भेद, निरक्षता, गरीबी आदि का यथार्थ दर्शन होता है। अपनी प्रसिद्ध कविता 'कौन्च हूँ मैं' में इन्होंने लिखा है–

''कौन्च हूँ मैं
भुक्त भोगी मैं,
तुम्हारे तीर का,
दर्द मेरा,
और मेरा संताप,
दूसरों के,
पाप का मैं भेगता
अभिशाप।''[2]

दलितों के जीवन को नरक सदृश्य बनाने में सवर्णों का ही हाथ रहा है। सवर्णों ने ही बुद्धिबल का प्रयोग कर अनपढ़ दलितों को अछूत घोषित कर दिया और स्वयं समाज के श्रेष्ठजन बन गए। ब्राह्मणवादी व्यवस्था का अभिशाप ही दलितों ने भोगा है। फिर भी अलितों की संवेदना जीवंत है और वे प्रतिकार तो करते हैं परंतु उनका उद्देश्य विषमताकारी व्यवस्था को ध्वस्त करना है। दलित ब्रह्मणों, ठाकुरो, भूमिहारो, राजपूतो आदि सवर्ण जातियों के वर्चस्व को तोड़ समरस समाज की रचना करना चाहते हैं। तभी तो 'गीत' कविता में अपनी भावना को अभिव्यक्त कर डॉ. श्यौराज कहते हैं–

''समता, स्वतंत्रता के नए गीत गाये हम,
इंसानी भाईचारा के डंके बजाये हम।''[3]

जुल्म करनेवाले सवर्णों को मिटाना दलित चेतना का ध्येय नहीं बल्कि उनका उद्देश्य समानता आधारित समाज की स्थापना है। वे हिंसा, उत्पीड़न शोषण के विरुद्ध समता–स्वतंत्रता के गीत गाकर इंसानी भाईचारा, एकता का विकास चाहते है। डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन की कविताएँ दलित उत्पीड़न को रेखांकित कर उज्वल भविष्य निर्माण हेतु दलितों में प्रेरणा जगाती है। इनकी कहानियाँ भी जाति–वर्ण व्यवस्था स ेउपजी समस्याओं पर केन्द्रित है। हिन्दुवादी समाज में जातीय ढ़ाँचे ने दलितों को किस प्रकार हाशिए पर धकेला और धर्म, अंधविश्वास कुरीतियों आदि के जरिए किस तरह से विषमता को बरकरार रखने का जाल बुना गया है इसका उद्भेदन श्यौराज सिंह बेचैन की कहानियाँ करती है।

अपना हित साधने के उद्देश्य से ही सवर्णों ने दलितों को शोषण की चक्की में पिसने का बंदोबस्त कर रखा है। दलितों का पग–पग अपमान इसलिए किया जाता है ताकि उनका मनोबल टूटा रहे और वे स्वयं को हीन मानकर स्वतः समाज की मुख्यधारा से दूर रहे हैं। ऐसी परिस्थितियों के चलते ही एक पढ़ालिखा संस्कारित दलित भी अपनी जाति छुपाने को विवश हो जाता है। 'ओंल्डएज होम' कहानी में विवेच्य लेखक ने इसी तथ्य को आधार बनाया है और बताया है कि कैसे एससी युवक अपनी जाति सामाजिक प्रतिष्ठा को बचाए रखने के लिए छुपाता है। स्वयं को हाई–सोसाइटी का होनहार साबित करने के चक्कर में बूढ़े माता–पिता को ओल्डएज होम भेज देता है। जहाँ जातीय जिल्लत झेलते हुए विक्षुब्ध पिता आत्महत्या कर लेता है। समाज में जातीयता का मकड़जाल इस कदर व्याप्त है कि हर भलामानुष आजिज हो उठा है। ''उठते–बैठते, खाते–पीते, आते–जाते हर कोई जाति पूछने लगा है। जाति के दर्जे के हिसाब से व्यवहार करने लगा है। जाति का होना एक सच है पर एक जाति बुरी दूसरी अच्छी, एक नीची, दूसरी ऊँची कैसे हो सकती है?''[4] कहानी का उपरोक्त कथन स्पष्ट कर देता है कि समाज में व्यक्ति के सम्मान का एक बड़ा आधार जाति है। इसलिए हर कोई एक–दूसरे की जाति जानना चाहता है। आधुनिक सभ्य समाज में जातीयता की आग घृणित माहौल पैदा कर रही है। डॉ. श्यौराज सिंह की 'सदेश' एवं 'क्या करे लड़की' जैसी कहानी से साबित होता है कि जातीयता इश्क–मुहब्बत में भी बाधक है। प्रेम–विवाह समाज में अस्वीकार्य है और अंतरजातीय प्रेम तो मौत का फरमान है। गाँव, शहर, पुलिस–प्रशासन और मंत्री से संतरी तक सभी जातीय बंधन से बँधें हैं। समाज में जाति सर्वोच्च है व्यक्ति नहीं। समाज को इस स्थिति से मुक्ति तभी मिलेगी जब जाति रूपी नासूर मिटेगा पर कहानीकार के तौर पर श्यौराज सिंह को विश्वास है कि जाति व्यवस्था नहीं टूटेगी और उनके इसी विश्वास की पुष्ट उपरोक्त कहानियाँ करती है।

साहित्यकार के रूप में श्यौराज सिंह बेचैन अपनी रचनाओं से दलितों को प्रेरित करते हैं कि भाग्यवाद, नियतिवाद, रूढ़िवाद, कर्मफल, पुनर्जन्म जैसे पाखंडों से बचे और वैज्ञानिक–तार्किक धारणों को बढ़ावें। बाबा साहेब की भाँति ही श्यौराज सिंह भी दलितों की मुक्ति का मार्ग शिक्षित बनने में ही देखते हैं। स्वयं श्यौराज सिंह बेचैन भी शिक्षा के महत्व से बखूबी परिचित रहे हैं। शिक्षा ग्रहण करने की बलवती इच्छा के बूते ही आज दलित बालक श्यौराज पत्रकार, लेखक, प्रोफेसर जैसे सम्मानित पदों तक पहुँच पाए है। अन्यथा इनकी सामाजिक परिस्थितियाँ बाल्यावस्था में इनके शिक्षा ग्रहण के प्रतिकूल रही है। सौतेला पिता इसलिए पीटता था कि श्यौराज शिक्षा कर पाए! तो अनाथ बालक श्यौराज के सामने पेट भरने की समस्या भी मुँह बाए खड़ी थी। परंतु ''मैं पढ़ंगो, एक फेरा कोशिश जरूर करंगो। अगर दसवीं पास नॉय करि पाओ, तो हार मान लिंगो, पर बिना कोशिश करे तो नॉय मानंगो। कोई मेरो संग्गु देउ या मत देउ। मैं एक–एक अक्षर के बदले अपने खून की एक–एक बूँद दे दुँगो पर पढ़नो नॉय छोड़ंगो।''[5]

भावना के वशीभूत होकर बालक श्यौराज ने 'अपना बचपन अपने कंधो पर' उठा लिया। खेतों में काम किया, पढ़ानेवाले शिक्षक के पास बंधुआ मजदूरी की, भूख बर्दाश्त किया और ताने सुनने के बाद भी पढ़ाई की ललक नहीं छोड़ी। वस्तुतः जाति आधारित इस हिन्दूवादी समाज में शिक्षा की ज्योत ही दलित प्रगति का मुख्य आधार रहा है और तमाम दलित चिंतको ने इसीलिए दलितों को 'शिक्षित बनो' का मंत्र दिया है। श्यौराज सिंह बेचैन का चिंतन भी इस तथ्य को स्वीकारता है।

निष्कर्ष

समकालीन हिन्दी साहित्य क्षितिज पर दलित साहित्यकार के तौर पर डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन दलित चेतना का प्रवाह अपनी हर रचना में करते आ रहे हैं। इनके लेखन की हर विधा में दलित समस्या है और सुलगते–दलितों के जीवन का यथार्थ प्रस्तुत कर समाज का स्याह चेहरा भी इन्होंने उजागर कर दिया है। इनका साहित्य दलितों की जड़ता पर प्रहार करता है और युगों–युगों से प्रताड़ित–शोषित दलितों को 'अप्प दीपो भव' का मार्ग सुझाता है।

संदर्भ–ग्रंथ

1. 'दलित–विमर्श' लेखक 'श्यौराज सिंह बेचैन', अनामिका प्रकाशन नई दिल्ली पृ. सं. –14
2. 'कौन्च हूँ मैं' लेखक–श्यौराज सिंह बेचैन',प्रकाशन–वाणी प्रकाशन नई दिल्ली पृ. सं.–20
3. 'नई फसल' लेखक–श्यौराज सिंह बेचैन', प्रकाशन– वाणी प्रकाशन नई दिल्ली पृ. सं.–117
4. 'भरोसे की बहन' लेखक–श्यौराज सिंह बेचैन', प्रकाशन– वाणी प्रकाशन नई दिल्ली पृ. सं.–29
5. 5. 'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' लेखक–श्यौराज सिंह बेचैन', प्रकाशन– वाणी प्रकाशन नई दिल्ली पृ. सं. –301